RNI No. 26 . . रजि. नं. पी.बी./जे.एल-011/2018-20

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्ष: 75, अंक : 13 एक प्रति 2 : रुपये
रविवार 10 जून, 2018
विक्रमी सम्वत् 2075, सृष्टि सम्वत् 1960853119
दयानन्दाब्द : 194 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये
आजीवन शुल्क : 1000 रुपये
दूरभाष : 0181-2292926, 5062726
E-mail: apspunjab2010@gmail.com,
www.aryapratinidhisabha.org
POSTAGE PAID MAIL BUSINESS CENTRE 07 JUN 2018

वर्ष-75, अंक : 13, 7-10 जून 2018 तदनुसार 28 ज्येष्ठ सम्वत् 2075 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

सब पशुओं की रक्षा

ले०-स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

ये रात्रिमनुतिष्ठन्ति ये च भूतेषु जाग्रति।
पशून्ये सर्वान्रक्षन्ति ते न आत्मसु जाग्रति ते नः पशुषु जाग्रति।।
-ऋ. १९।४८।५

शब्दार्थ-ये = जो रात्रिम् = रात्रि के समय अनुतिष्ठन्ति = अनुष्ठान करते हैं च = और ये = जो भूतेषु = भूतों के, पदार्थमात्र के विषय में जाग्रति = जागते हैं, सावधान रहते हैं ये = जो सर्वान् = सभी पशून् = पशुओं की रक्षन्ति = रक्षा करते हैं, ते = वे नः = हमारे आत्मसु = आत्माओं में जाग्रति = जागते हैं, सावधान हैं और ते = वे ही नः = हमारे पशुषु = पशुओं में जाग्रति = जागते हैं, सावधान हैं।

व्याख्या-इस मन्त्र में कई उपदेश हैं-

(१) 'ये रात्रिमनुतिष्ठन्ति' = जो रात्रि को बनाते हैं अथवा जो रात्रि के समय अनुष्ठान करते हैं। श्लेषालङ्कार के द्वारा वेद ने दो बातें एक ही वाक्य में कह दी हैं। रात्रि का एक अर्थ रात और दूसरा अर्थ है रमणसामग्री। जो रात्रि को=रमणसामग्री को बनाते हैं, अर्थात् जो संसार की सुखसमृद्धि में वृद्धि के साधनों को प्रस्तुत करते हैं और 'जो रात्रि के समय अनुष्ठान करते हैं', एकान्त समय में भगवान् की आराधना और धर्मार्थ का चिन्तन करते हैं। भाव यह कि मनुष्य का कर्त्तव्य है कि वह संसार को अधिक सुखी बनाने का निरन्तर यत्न करे तथा एकान्त समय में भगवद्भक्ति, आत्मचिन्तन, धर्मार्थ-विचार किया करे।

(२) 'ये च भूतेषु जाग्रति' = जो भूतों में जागते रहते हैं, अर्थात् जिन्हें पदार्थों के गुण-धर्मों का ज्ञान है। यह सारा संसार मनुष्य के लिए है, उसे यदि संसारस्थ पदार्थों के गुणों, धर्मों का ज्ञान न हो, तो वह उनसे उपयोग कैसे लेगा? प्रत्येक पदार्थ से योग्य उपयोग लेने के लिए यह ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

(३) 'पशून् सर्वान् ये रक्षन्ति' = जो सभी पशुओं की रक्षा करते हैं। इस निर्देश पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। पशुभक्षकों को इसका मनन करना चाहिए। रक्षा करनी है तो सभी रक्षा के अधिकारी हैं। अथर्ववेद [१९।५०।३] में कहा है-'रात्रिंरात्रिमरिष्यन्तस्तरेम तन्वा वयम्' = हम किसी भी रात्रि में हिंसा न करते हुए इसी शरीर से तर जाएँ।

दूसरे शरीर की प्रतीक्षा न करनी पड़े, अतः इसी शरीर में अहिंसादि सद्गुणों का अनुष्ठान करे। इसी तत्त्व को सामने रखते हुए पूर्वोक्त बातों का गम्भीर आशय इस भाँति है-

(१) एकान्त समय में प्रभुभक्ति करनी चाहिए। उसके लिए (२) सब भूतों में सावधान रहना चाहिए, अर्थात्-'यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः। तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः' [यजुः० ४०।७]= जिस समय ज्ञानी की दृष्टि में सभी प्राणी आत्मसमान हो गये, उस समय समदर्शी को क्या शोक? और क्या मोह? सबको अपने समान मानना चाहिए। उसका आचरण द्वारा प्रमाण देने के लिए (३) सब पशुओं की रक्षा करनी चाहिए, अर्थात् किसी की हिंसा नहीं करनी चाहिए। यज्ञप्रधान कहे जाने वाले यजुर्वेद के पहले मन्त्र में भी 'यजमानस्य पशून् पाहि' [यजमान के पशुओं की रक्षा कर] प्रार्थना है। जो इन गुणों से सम्पन्न हैं, सचमुच वे सभी के आत्माओं में जागते हैं, वे उन्हें कोई पीड़ा नहीं देते। वे सभी के पशुओं के विषय में भी सावधान हैं। ऐसा नहीं कि अपनों की रक्षा और परायों की हिंसा। नहीं, सबकी रक्षा। अथर्ववेद [१७।१।४] में प्रार्थना है-'प्रियः पशूनां भूयासम्' = मैं पशुओं का प्यारा बनूँ। पशुओं का हिंसक उनका प्रिय कैसे बन सकता है?

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

आगामी आर्य महासम्मेलन बरनाला में

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (रजि.), गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा जालन्धर के तत्वावधान में आगामी आर्य महासम्मेलन **11 नवम्बर 2018** को बरनाला में आयोजित किया जा रहा है। इसलिये पंजाब की समस्त आर्य समाजों से निवेदन है कि वह इन तिथियों में अपनी अपनी आर्य समाज का कोई कार्यक्रम न रखें और इस आर्य महासम्मेलन को सफल बनाने के लिये पूरी शक्ति से जुट जाएं। आपके सहयोग से इससे पूर्व 17 फरवरी 2017 को लुधियाना और 5 नवम्बर 2017 को नवांशहर में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब सफल आर्य महासम्मेलन कर चुकी है। आशा है इस आर्य महासम्मेलन में भी आप का पूरा पूरा सहयोग मिलेगा।

प्रेम भारद्वाज
सभा महामंत्री

गयस्फानो अमीवहा वसुवित्पुष्टिवर्धनः।
सुमित्रः सोम नो भव।।
-ऋ० १.९१.१२

भावार्थ-हे सोम! आपकी कृपा के बिना पुरुषों को धन, विद्या आदि प्राप्त नहीं हो सकते, न ही अनेक प्रकार के रोग नष्ट हो सकते हैं, न ही शरीर, मन, इन्द्रिय और आत्मा की पुष्टि हो सकती है। इसलिए हम सबको योग्य है कि इस आप परम पूज्य परमात्मा को ही अपना परम प्यारा सच्चा मित्र बनाएँ, जिससे हम सबका भला हो।

मान्तः स्थुर्नो अरातयः

ले.-प्रो. ओम कुमार आर्य वैदिक प्रवक्ता, जींद

शीर्षक वाला मंत्रांश ऋग्वेद के एक मंत्र का अन्तिम हिस्सा है। मन्त्र अथर्ववेद और ऐतरेय ब्राह्मण में भी आया है। आइये, पहले मन्त्र को देख लें कि क्या कहता है-

ओं मा प्र गाम पथो वयम्। मा यज्ञादिन्द्र सोमिनः। मान्तः स्थुर्नो अरातयः।।

ऋ. 10.571 अथर्व 13.1.59 ऐ. ब्रा. 3.1 इस मन्त्र में मुख्यतः तीन बातों पर जोर दिया गया है। एक, हम सुपथ से कभी विचलित न होवें। दो, हम यज्ञादि शुभ कार्यों से दूर न जायें। तीन, अदानी=अदानशील (कृपण) व्यक्ति हममें वास न करें। अथवा यह भी कि अदानशीलता, अदानत्व, कृपणता के भाव कभी हमारे मन में वास न करें। तीनों बातों पर हम चर्चा करेंगे, किंतु विस्तार से विमर्श तीसरे खण्ड पर करना है अर्थात् 'मान्तः स्थुर्नो अरातयः' इस लेख का मुख्य विवेचन विषय है।

आइये प्रथम खण्ड को लें कि सुपथ से कभी विचलित न होवें। प्रश्न पैदा होता है कि पथ, पंथ या सुपथ= सुपंथ क्या है? महाभारतकार ने तो यह कहकर मामला निपटाया कि पंथ अनेक हैं, किसे चुनें, किसे छोड़ें, यह विकट समस्या है। इसलिये यही कहना उचित है कि **महाजनो येन गतः स पन्था** महापुरुष, विद्व्ज्जन, सदाचारी लोग, आप्त पुरुष जिस पथ पर चलते आये हैं, बस वही पथ रास्ता अनुगमनीय है। ऐसे पथ को छोड़कर दुष्टों, दुरात्माओं, कुत्सित कदाचारियों के कुसंग में रहकर यदि हम कुपथ पर चलते हैं तो सिवाय विनाश के और कोई अज्जाम हो ही नहीं सकता। वेद स्पष्ट चेतावनी देता है-

ओं मा न समस्य दूढयः परिद्वेषसो अंहतिः।

उर्मिर्न नावमा वधीत्।।

ऋ. 8/75/9

अर्थात् यदि कोई धर्मात्मा विद्वानों का साथ छोड़कर दुर्बुद्धि व्यक्तियों के कुसंग में फँस जाता है, उसका नाश इस प्रकार होता है जैसे महासागर की क्रुद्ध, बिफरी उत्ताल लहरें नौकाओं को डुबोकर नष्ट कर देती हैं। इसलिये हम **स्वस्ति पन्थामनुचरेम** से विचलित होकर यदि अस्वस्ति पंथ का अनुगमन करते हैं, तो विनाश निश्चित है। अतः **मा प्र गाम पथो वयम्** यह हमारा संकल्प होना चाहिए। नीतिकार ने भी **न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः** अपने इस कथन से उक्त संकल्प की पुष्टि की है।

वेद मंत्र का अगला खण्ड कहता है कि हम यज्ञ से कभी दूर न हटें। **मा यज्ञादिन्द्र सोमिनः**, हे ऐश्वर्यशाली इन्द्र हमें सामर्थ्य दो, नैतिक दृढ़ता दो कि हम समस्त ऐश्वर्यों के स्त्रोत यज्ञ को कभी न त्यागें। शतपथकार ने **यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म** कहकर यज्ञ की महिमा का गायन किया है। वस्तुतः यज्ञ अकेला श्रेष्ठ कर्म नहीं है। जितने भी शुभ और श्रेष्ठ कर्म हैं उन सबकी संज्ञा यज्ञ है। यज्ञ कामधेनु है, यज्ञ पारसमणि है। वेद ने भी **अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः** कहकर यज्ञ की प्रशस्ति को गाया है। महाभारतकार का मानना है कि वेदाध्ययन का एक शुभ फल यह है कि व्यक्ति यज्ञ से जुड़ जाता है। **अग्निहोत्रफला वेदाः अस्तु।**

अब हमें मंत्र के तृतीय और अंतिमाँश पर ध्यान देना चाहिए। मानव समाज के लिये, हमारे दैनंदिन जीवन के लिये, परस्पर व्यवहार के लिये जो अत्यंतावश्यक वस्तु है, उसकी ओर इंगित करते हुए मंत्र निषेध शैली में कहता है कि **मान्तः स्थुर्नो अरातयः** अर्थात् हममें कोई भी 'अराति' न हो। अराति शब्द विरोधी, द्वेष रखने वाले, शत्रु के अर्थ में प्रयुक्त होता है। किन्तु यहाँ इसका अर्थ है, अदानी दान न देने वाला, कृपण, कदर्य, कंजूस। वैसे कृपणादि शब्द अराति की भावना को एक सीमा तक ही व्यक्त करते हैं। अराति और अराव्ण दोनों ही लगभग समानार्थी हैं। अराति की तरह अराव्ण भी समाज में नहीं होने चाहिएं, इसीलिए तो वेद कहता है-

अपघ्नन्तो अराव्ण-

ऋ. 9.63.5

अदानियों का नाश करते हुए हम अपना ऐश्वर्य बढ़ायें, समस्त संसार को श्रेष्ठ बनायें। यहाँ यह समझ लेना बहुत जरूरी है कि प्रस्तुत मत्राँश यह कहता है कि हमारे बीच कोई अदानी न हो अथवा हमारे मनों में अदानशीलता, कृपणता, कदर्यता के भाव न हों, तो अर्थापत्ति यह हुई कि हम दानशील होवें। हमारे स्वभाव में दानशीलता, दानवृत्ति होनी चाहिए। ऊपर बताया जा चुका है कि हम यज्ञ से दूर न हटें, जिसका सीधा सा अर्थ है कि हम पूज्य जनों के सत्कार (देवपूजा), अच्छा संग (संगतिकरण) और दान देने की सुप्रवृत्ति से कभी दूर न हटें। दान, प्रतिदान, आदान, प्रदान की नींव पर ही मनुष्य समाज टिका हुआ है। जहाँ भी आदान प्रदान बाधित हो जाता है वहीं पर समाज में नाना प्रकार के दोष, विकार पैदा हो जाते हैं और मनुष्य समाज की उन्नति रुक जाती है। विषमता, शोषण, उत्पीड़न, असहायों, दीनहीनों पर भयंकर अत्याचारादि यह सब अदानशीलता, अनुदारता, बेहिसाब परिग्रह वृत्ति के ही भयावह दुष्परिणाम हैं। इसीलिए वेद स्पष्ट घोषणा करता है-

देहि मे ददामि ते, नि मे धेहि नि ते दधे।

-यजु. 3/50

अर्थात् दो, बदले में पाओ। इस नियम को तोड़ोगे तो समाज को विनाश के कगार की ओर धकेलोगे। सृष्टि के आदि में प्रजापति ने जो अपनी तीन सन्तानों को 'द' उपदेश दिया था वह सदा-सदा के लिये प्रासंगिक है, सार्थक है, हितकारी है। प्रजापति ने कहा था-

देवताओं के लिये 'द' अर्थात् 'दाम्यत' अपनी कुप्रवृत्तियों, पतनकारी वासनाओं, घातक कुविचारों का सतत् दमन करते रहो ताकि तुम्हारा देवत्व बरकरार रहे। सावधानी हटी कि पतन की दुर्घटना घटी, कोई बचा नहीं सकता।

मानव समाज के लिये 'द' अर्थात् दान भावना को सदा अपनाये रखो। द=दत्त दान देते रहो, समाज को आगे बढ़ाते रहो। ज्यों ही अदान भावना मनुष्यों पर हावी होगी, त्यों ही मनुष्य समाज पतन के भयावह गर्त में गिर जायेगा और दानवों के लिये 'द' से ताप्पर्य था 'दयध्वम्' अर्थात् दूसरों पर दया करो, दया भावना ही तुम्हें दानव से मानव और फिर देव बना सकती है और कोई अन्य उपाय है ही नहीं।

अतः प्रजापति का 'द' उपदेश हम मानवों को दान का महत्त्व समझाता है। आज भी सावन भादों की काली-काली घटाओं का द-द-द करके गड़गड़ाहट पूर्ण गर्जन, नदी नालों का द-द-द करते हुए तीव्र गति से बहते जाना, आँधी, तूफान का कर्णभेदी हुँकार महासागर की उत्ताल झालों को द-द-द करके सागर तट से टकराना, फिर पीछे लौट जाना, हम मनुष्यों को प्रजापति के 'द' (दान) उपदेश का स्मरण करवाता है और सचेत करता है कि दान-भावना त्यागी नहीं, रात से अराति, राव्ण से अराव्ण बने नहीं कि तुम्हारे सामने समस्याओं का अम्बार लगा नहीं। याद रहे कि कितनी ही सुन्दर, आदर्श व्यवस्था क्यों न हो, यदि मनुष्य अदानशीलता, परिग्रह, संचयादि के चक्रव्यूह में फँसा रहा तो देर सवेर अशांति, अफरातफरी, अव्यवस्था फैलेगी, कोई ताकत रोक नहीं सकती।

निष्कर्षतया हम कह सकते हैं कि दान भावना हम सबके लिये सुखों का आधार है। वहीं अत्यन्त लोभ, लालच, संग्रह भावना, हर चीज को अपने यहाँ मुष्टिबद्ध रखना दुःखों का प्रमुख कारण है। आचार्य चाणक्य तो यह मानते हैं कि दान से धनैश्वर्य का शुद्धिकरण होता है। गोस्वामी तुलसीदास स्पष्ट घोषणा करते हैं कि पानी बाढयो नाव में अरु घर में बाढयो दाम।

दोनों हाथ उलीचिये यही सयानो काम।।

सन्त कबीरदास का कथन है-

चिड़ी चोंच भर ले गई नदी न घटियो नीर।

दान दिये धन न घटे कह गये दास कबीर।।

अतः हमें यथासामर्थ्य दान परंपरा को आगे बढ़ाते रहना चाहिये। दान-यज्ञ में हमारी आहुति अवश्य पड़ती रहनी चाहिये। आइये विवेच्य मंत्र की भावना को इन शब्दों में गुनगुनायें-

कृपालु देव कृपा कीजो हम नहीं सुपथ को छोड़ें।

यज्ञादि शुभ कार्यों से हम कभी नहीं मुख मोड़ें।।

अदाशीलता, कृपणता को सदा दूर हम रखें।

परहित और दान भाव से मन को भरपूर हम रखें।।

अदानी होना कृतघ्नता है, यह पाप कदापि करें नहीं।

'सहस्त्र हस्त संकिरः' के पथ पर चलने से डरें नहीं।।

यज्ञ संस्कृति को अपनायें दान संकल्प हमारा हो।

'मान्तः स्थुर्नो अरातयः' भगवन् आदर्श हमारा हो।।

सम्पादकीय

शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक उन्नति

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज के उद्देश्य को निर्धारित करते हुए छठे नियम में लिखा है कि-संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने इस नियम में उन्नति के सोपान निर्धारित किए हैं। महर्षि दयानन्द की दृष्टि में वही व्यक्ति संसार का उपकार कर सकता है जो क्रमश: शारीरिक उन्नति करते हुए आत्मिक उन्नति करता है उसके बाद सामाजिक उन्नति करता है। इस प्रकार जो व्यक्ति संसार का कल्याण करने की भावना रखता है, कृण्वन्तो विश्वमार्यम् के उद्घोष को उद्घोष को सार्थक करना चाहता है उसे इसी क्रम से शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक उन्नति करते हुए कार्य करना होगा। इस नियम के अनुसार चलते हुए मनुष्य जितना शारीरिक एवं आत्मिक रूप में उन्नत होगा उतना ही समाज, राष्ट्र एवं संसार की उन्नति होगी। आईये शारीरिक उन्नति के पहलुओं पर विचार करें-

मनुष्य जीवन का उद्देश्य अपने को सुखमय तथा शक्ति सम्पन्न बनाना है। इस उद्देश्य की पूर्ति तभी सम्भव हो सकती है जब हमारे शरीर नीरोग तथा सबल हों। मनुष्य का जीवन एक संग्राम भूमि है जिसमें हमें प्रतिदिन सैकड़ों विरोधी शक्तियों से युद्ध करना पड़ता है। अत: इस जीवन संग्राम में वही विजय हो सकता है जो बल और शक्ति से पूर्ण है। वेद में भी मानव प्रार्थना करता है कि- विश्वा आशा वाजपतिर्जयेयम्। अर्थात् मैं सब प्रकार के बलों का स्वामी बनकर सब दिशाओं में विजय प्राप्त करूं। आज संसार शक्ति का उपासक है अर्थात् जिसके पास शक्ति और बल है, संसार के प्राणी उसका ही सम्मान करते हैं। शक्ति सम्पन्न मनुष्य को सताना तो दूर रहा, कोई भी मनुष्य उसकी ओर आंख उठाकर भी नहीं देख सकता। इसके विपरीत कमजोर मनुष्य को हर कोई सताता तथा पीड़ा पहुंचाता है। अत: यदि हम अपने जीवन को सुखमय तथा शक्ति सम्पन्न बनाना चाहते हैं और संसार में प्रतिष्ठा और सम्मान से जीना चाहते हैं और इस अमूल्य मानव जीवन को यूं ही न खोकर उसके द्वारा कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य करना चाहते हैं तो हमें सबसे पहले अपने शरीर को स्वस्थ, बलवान् तथा नीरोग बनाना होगा। शरीर के स्वस्थ और बलवान बन जाने पर मन अपने आप ही थोड़े से साधन द्वारा बलवान् तथा दिव्य शक्तियों का केन्द्र बन जाएगा। क्योंकि शरीर और मन का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। शरीर के सूक्ष्म तत्वों से ही मन बनता है। अत: शरीर के बलवान् होने पर मन में भी उमंग और उत्साह होगा।

शरीर को स्वस्थ और बलवान् बनाने के लिए शरीर शास्त्रियों ने अनेक स्वाभाविक तथा सरल उपायों का आविष्कार किया है। किन्तु मनुष्य उन सरल तथा स्वाभाविक उपायों को छोड़कर कृत्रिम उपायों की ओर ही अधिक अग्रसर हो रहे हैं। यही कारण है कि हम जितना भी कृत्रिम उपायों के द्वारा शरीर को स्वस्थ तथा बलवान् बनाने का यत्न करते हैं, उतना ही हमारा शरीर निर्वीर्य, निस्तेज, निर्बल तथा रोगग्रस्त होता चला जाता है। शरीर के निर्बल तथा रोगग्रस्त होने के कारण आज हम पूर्णायु को न प्राप्त कर अल्पायु में ही काल के ग्रास बन रहे हैं। हमारे पूर्वज महर्षियों ने स्पष्ट कहा है-शतायुर्वै पुरूष: अर्थात् मनुष्य निश्चय से सौ वर्ष की आयु वाला है। इतना ही नहीं महर्षि मनु ने तो यहां तक लिखा है कि- सतयुग में मनुष्य सर्वथा नीरोग तथा सब प्रकार से पूर्णकाम थे तथा उनकी आयु 400 वर्ष की थी, त्रेता में 300 वर्ष थी, द्वापर में 200 वर्ष थी तथा कलियुग में 100 वर्ष की ही रह गई है। भीष्म पितामह जैसे महापुरूषों का दो-दो सौ वर्ष तक जीना आज हमारे लिए असम्भव घटना हो गई है। अत: दीर्घायु प्राप्त करने के लिए भी अपने शरीर को स्वस्थ तथा बलवान् बनाना हमारे लिए परम आवश्यक है। आज अन्य सब कामों के लिए हमारे पास समय है परन्तु शरीर को स्वस्थ, बलवान् और नीरोग बनाने के लिए और उसकी देखभाल करने के लिए समय नहीं है। जिस बात पर हमारा ध्यान सबसे पहले जाना चाहिए प्रथम तो उस बात पर हमारा ध्यान जाता ही नहीं और जाता भी है तो तब जब शरीर को नाना प्रकार के रोग और निर्बलताएं आकर घेर लेती हैं। शरीर निस्तेज तथा निर्बल बन जाता है। शरीर की सब मशीन ही अपना काम करना छोड़ देती है। उस समय भी हम अपने शरीर को नीरोग बनाने के लिए दवाओं को खाने और इंजेक्शन लगवाने आदि कृत्रिम साधनों की ओर ही ध्यान देते हैं। स्वाभाविक साधनों की ओर तो हमारा ध्यान जाता ही नहीं। प्रात: काल उठकर सैर करना, प्राणायाम करना, योगासन करना आदि की ओर हम ध्यान नहीं देते। अपनी दिनचर्या को नियमित बनाने का प्रयास नहीं करते, अपने खान-पान की ओर ध्यान नहीं देते जिसके कारण हमारा शरीर रोगों का घर बन जाता है।

हमारे इस शरीर को कृत्रिम साधनों से स्वस्थ बनाने की प्रवृत्ति ने ही नाना प्रकार की दवाओं का आविष्कार किया है। आज जिस प्रकार नाम के धर्मगुरूओं ने धर्म को कमाई का साधन बना रखा है, उसी प्रकार डॉक्टरों ने भी स्वास्थ्य को अपनी कमाई का साधन बना लिया है। हम सब भी दवाईयों के चक्कर में पड़कर अपने स्वास्थ्य को खराब कर देते हैं। इंजेक्शनों आदि के द्वारा शरीर में अस्थाई अर्थात् क्षणिक स्फूर्ति और चेतना को ही हमने शरीर का स्वास्थ्य समझ लिया।

आज बहुत कम ऐसे सौभाग्यशाली मनुष्य होंगे जो शरीर से पूर्ण स्वस्थ हों। कई लोग तो वास्तव में स्वस्थ न होते हुए भी भूल से अपने आपको स्वस्थ समझ लेते हैं। किन्तु वास्तव में शरीर विज्ञान के आचार्यों ने जो स्वस्थ तथा नीरोग मनुष्य के लक्षण बताए हैं, उनके अनुसार ढूंढने से कोई सौभाग्यशाली मनुष्य ही स्वस्थ और नीरोग मिलेगा। आयुर्वेद आरोग्यता के निम्न लक्षण बताता है कि-भोजन ग्रहण करने की स्वाभाविक रूचि और अभिलाषा का होना, खाए हुए भोजन का सुखपूर्वक भली प्रकार से पच जाना, मल मूत्र और अपान वायु का विसर्जन नियमपूर्वक भली प्रकार सरलता से हो जाना, शरीर का हमेशा हल्का व फुर्तीला रहना, इन्द्रियों में सदा प्रसन्नता तथा कार्यक्षमता का होना, निद्रा और जागरण दोनों का बिना किसी कष्ट के सुखपूर्वक होना, सोने और जागने में सुख और शान्ति का अनुभव होना, शरीर में बल, पराक्रम और आरोग्यता का होना, मुखादि अंगों का तेजस्वी तथा सुन्दर वर्णयुक्त होना ये स्वस्थ तथा दीर्घ जीवन के लक्षण हैं।

अब हमें विचार करना है कि आरोग्यता के इन लक्षणों के अनुसार क्या हम पूर्ण स्वस्थ और नीरोग हैं? क्या हमारे अन्दर आरोग्यता के उपर्युक्त लक्षण विद्यमान हैं? यदि नहीं तो अपने को पूर्ण स्वस्थ और नीरोग समझ लेना स्वयं को धोखा देना है। आयुर्वेद में वर्णित स्वास्थ्य के लक्षणों के द्वारा ही पूर्ण स्वस्थ और नीरोग बन सकते हैं। बनावटी साधनों के द्वारा हम कुछ समय के लिए आरोग्यता का अनुभव कर सकते हैं परन्तु उसका प्रभाव खत्म होने पर हम पुन: दु:खी होंगे। अत: हमें प्रकृति के स्वाभाविक साधनों से अपने शरीर को स्वस्थ, बलवान् और नीरोग बनाने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए। जितना हम व्यायाम करेंगे, योग करेंगे, प्राणायाम करेंगे, अपनी दिनचर्या को नियमित करेंगे अर्थात् समय पर सोना, समय पर जागना आदि कार्यों पर ध्यान देंगे तो कोई भी रोग हमारे शरीर को नहीं लग सकता। हमारा असंयमित जीवन ही हमें दु:खों, कष्टों और क्लेशों की ओर ले जाता है। अत: हम अपने जीवन को संयमी बनाकर, आरोग्यता को प्राप्त कर दीर्घायु जीवन को प्राप्त करने का प्रयास करें तभी हम अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

प्रजा के सुखों में राजा की शान

ले.-डॉ. अशोक आर्य १०४ शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी २०१०१० गाजियाबाद

जनता द्वारा चुने गए शासक स्वरूप प्रतिनिधि का राजतिलक करते हुए जनता की ओर से निर्धारित पुरोहित जब राजा को अनेक प्रकार के उपदेश देते हुए क्या करणीय है तथा क्या नहीं, इस प्रकार की शिक्षा देता है, (वर्त्तमान युग में संविधान के अनुसार चलने की शपथ दिलाता है) तो राजा के लिए भी कुछ उत्तर स्वरूप प्रतिज्ञाएं आवश्यक हो जाती है। इसलिए राजा अपने शासन में होने वाली उस की भावी योजनाओं को बताते हुए कहता है कि-

शिरो में श्रीर्यशो मुखं त्विषिः केशाश्च श्मश्रूणी।

राजा में प्राणोऽअमृत असम्राट् चक्षुर्विराट् श्रोत्रम्।।५।।

जिह्वा में भद्रं वाङ्महो मनो मन्युः स्वराड् भामः।

मोदाः प्रमोदाऽअंगुलीरङ्गानि मित्रं में सहः।।६।।

बाहू मे बालमिन्द्रीयं हस्तौ में कर्म वीर्याम्।

आत्मा क्षत्रमुरो मम।।७।।

पृष्ठीमें राष्ट्र मुदरम असौ ग्रीवाश्च श्रोणी।

ऊरुऽअरत्नी जानुनी विशो मेऽङ्गानि सर्वतः।।८ ।।

यजुर्वेद अध्याय २० मन्त्र ५-८

इन मन्त्रों के माध्यम से परमपिता परमात्मा राजा से कहलवा रहे हैं कि प्रजा की शोभा हमारा शिर है। प्रजा की सुख सुविधाएं बढ़ाता हैं, प्रजा प्रसन्न रहती है, प्रजा के पास किसी प्रकार का अभाव नहीं है सब प्रकार के धन ऐश्वर्यों की प्रजा स्वामी है तो मेरा सर शान से उंचा हो जावेगा। जब प्रजा के सुख समृधि में वृद्धि होती है तो मुझे भी यश मिलता है। इसलिए मैं सदा प्रजा के सुखों को बढ़ाने का प्रयास करता रहूंगा।

प्रजा का यश ही राजा का सुख

मन्त्र के माध्यम से राजा आगे प्रतिज्ञा करते हुए कह रहा है कि प्रजा का यश ही मेरा मुख है अर्थात् जब सुख और समृधि के कारण प्रजा का यश बढ़ता है तो मेरे मुख मंडल की शोभा भी बढ़ जाती है इसलिए मैं प्रजा के यश को सदा बढ़ाने का यत्न करता रहूंगा। मानव शरीर के विभिन्न भागों में मुख ही मुख्य होता है, इसलिए ही इसे मुख कहा गया है। ठीक उस प्रकार ही प्रजा के यश व् कीर्ति को दूर दूर तक ले जाना ही मेरा मुख्य कर्तव्य है। मैं सदा इस प्रकार का यत्न करता रहूंगा कि प्रजा का यश बढ़े। यही मेरा मुख्य कर्तव्य होगा।

जिह्वा सदा कर्तव्य की बातें किया करती है। इसलिए मेरी जिह्वा से सदा प्रजा के कल्याण की ही चर्चा होगी, यह जिह्वा सदा प्रजा के कल्याण के लिए ही बोले, इस जिह्वा से कभी इस प्रकार की कोई बात, इस प्रकार का कोई शब्द न निकले जिससे मेरी प्रजा का कोई भी अहित हो, कोई भी अपयश हो, इस प्रकार का प्रयत्न मैं सदा करता रहूंगा। इसलिए मेरी वाणी सदा प्रजा के महत्त्व की, प्रजा के हितों की, प्रजा के यश व कीर्ति को बढ़ाने की चर्चा मेरी जिह्वा, मेरी वाणी कराती रहेगी, इस प्रकार का मैं प्रजा को और आप को विश्वास देता हूँ।

राजा का मन सदा प्रजा का ज्ञान, उत्साह और उल्लास को बढ़ाता रहे। मन उत्साह बढ़ाने का कारण होता है तथा मैं यह भी प्रतिज्ञा करता हूँ कि मेरा मन सदा मेरी प्रजा का ज्ञान, उत्साह और उल्लास को बढ़ाता रहेगा। मैं अपने राज्य में उच्च शिक्षा की उत्तम व्यवस्था करूंगा ताकि प्रजा का ज्ञान बढ़े। जब ज्ञान बढ़ेगा तो निश्चित ही प्रजा उत्साहित होकर अपने व्यवसाय को आगे बढ़ाने का यत्न करेगी, जिससे उसका उल्लास भी चरम पर चला जावेगा। मैं राजा होने के नाते सदा इस प्रकार के प्रयत्न करता रहूंगा।

प्रजा के स्वालंबन का तेज ही राजा का तेज

मन्त्र के माध्यम से आगे राजा कहता है कि प्रजा के स्वालंबन का तेज ही मेरा तेज है अर्थात् मैं अपने राज्य में व्यवसाय की इतनी व्यवस्था करूंगा कि प्रजा को कुछ भी विदेश से न मंगवाना पड़े। सब वस्तुओं का उत्पादन मेरे राज्य में ही हो। इस प्रकार मेरी प्रजा परजीवी न हो कर पूरी तरह से स्वावलंबी बन जावेगी। इतना ही नहीं जिस प्रकार हमारी उंगलियाँ सब प्रकार के आनंद देने का कारण होती है, उस प्रकार ही प्रजा का प्रत्येक व्यक्ति मेरी उंगली के समान होगा। प्रजा का एक एक व्यक्ति जब अपनी उंगली को राज्य की समृधि देने के लिए कार्य करेगा तो निश्चय ही राज्य में स्वावलंबन आवेगा। इसलिए मैं प्रजा को अपनी उंगलियों के समान मान देता हूँ।

आमोद-प्रमोद की उत्तम व्यवस्था

जिस प्रकार जीव के विभिन्न अंग सुख का कारण होते हैं, उस प्रकार ही आमोद-प्रमोद से भी व्यक्ति को आनंद मिलता है, सुख मिलता है। अतः आमोद-प्रमोद करना भी व्यक्ति के सुख को बढ़ाने का कारण होता है क्योंकि मेरा उद्देश्य प्रजा को सुखी बनाना है, इसलिए प्रजा की प्रसन्नता के लिए, प्रजा के कल्याण के लिए यह आमोद-प्रमोद ही मेरे शरीर के विभिन्न अंगों के समान है। मैं अपने इन अंगों को सुचारू रूप से चलाने के लिए प्रजा के आमोद-प्रमोद की भी उत्तम व्यवस्था करूंगा।

प्रजा को ही अपने मित्रों का स्थान

आगे मन्त्र के द्वारा राजा बोलता है कि मानव शरीर की वास्तविक शक्ति तो आमोद-प्रमोद ही है। इससे ही मानवीय प्रसन्नता सम्बंधित होती है किन्तु इस आमोद-प्रमोद के कार्यों को कोई भी व्यक्ति अकेले संपन्न नहीं कर सकता। इसके लिए उसे अनेक मित्रों और साथियों की आवश्यकता होती है। इसलिए मेरे राज्य में आमोद-प्रमोद की उत्तम व्यवस्था हो सके, इसके लिए मैं अपनी प्रजा को ही अपने मित्रों का स्थान देता हूँ, ताकि हम मिल कर इतना कार्य करें कि हम सब की प्रसन्नता में निरंतर वृद्धि हो सके। इसलिए मैं प्रजा को अपना सच्चा मित्र बनाता हूँ।

प्रजा के अभाव को दूर करने का प्रयास

मन्त्र कहता है कि वह राजा ही सुखों का स्वामी हो सकता है। जिसके पास अपरिमित बल हो किन्तु यह बल प्रजा की सहन शक्ति से मिलता है। इसलिए राजा कहता है कि मैं अपने राज्य में इस प्रकार की व्यवस्था करूंगा कि मेरी प्रजा अधिक से अधिक सहनशील बन सके। इस का कारण है कि अनेक बार राज्य में दुर्भिक्ष या किसी अन्य कारणों से अनेक प्रकार की कमियाँ आ सकती है। इस अवस्था में यदि विरोध कर देती है तो राज्य में अव्यवस्था फैल जाती है और देश की बहुत हानि होती है किन्तु जब मैं सदा प्रजा के सुखों को बढ़ाने का प्रयास करूंगा तथा प्रजा को मुझ पर पूर्ण विश्वास होगा तो मेरी प्रजा अभाव के समय को भी सहन कर मेरी मित्र, मेरी सहयोगी बनी रहेगी। इसलिए मैं चाहूँगा कि मेरी प्रजा मुझ में विश्वास व्यक्त करते हुए इस अवस्था में सहन शक्ति का परिचय दे। इससे ही मेरे बल में, मेरी शक्ति में वृद्धि होगी, जो प्रजा के हित में ही होगी क्योंकि मैं निश्चिन्त हो प्रजा के इस अभाव को दूर करने का प्रयास करता रहूंगा।

मेरी जनता देश ही मेरी पीठ

शरीर के विभिन्न अंगों में पीठ का भी विशेष महत्व होता है। यह पीठ ही है, जो भारी से भारी बोझ उठा सकती है। शरीर का कोई अन्य अंग पीठ के समक्ष बोझा नहीं उठा सकता। इसलिए पीठ का भी महत्वपूर्ण स्थान माना गया है और इस मन्त्र के द्वारा राजा कह रहा है कि मेरा यह राष्ट्र, मेरा यह देश ही मेरी पीठ के सामान है क्योंकि पृष्ट भाग में, पीठ में सब प्रकार की शक्ति होती है। इसलिए कहा भी जाता है कि कभी पीठ मत दिखाना। इसलिए राजा कह रहा है कि मेरी जनता ही मेरी पीठ है, मेरी शक्ति है।

प्रजा मेरे शरीर के समान

मानव शरीर पैरों के बिना चल नहीं सकता, कंधे के बिना कुछ उठा नहीं सकता, गले के बिना उसका अस्तित्व ही नहीं रहता, कमर के बिना शक्तिहीन हो जाता है, जंघा शक्ति का प्रतीक होती हैं, कोहनी के बिना बाजू मुड़ता नहीं, जिस के बिना कोई कार्य हो ही नहीं सकता, कुछ इस प्रकार की ही अवस्था हमारे घुटनों की भी होती है। इस प्रकार ही हमारे शरीर के प्रत्येक अंग का कुछ न कुछ महत्व होता है। इन में से कोई भी अंग ढीला हो जाता है तो शरीर बेकार हो जाता है, यह ठीक से कुछ भी नहीं कर सकता। राजा कहता है कि मेरी प्रजा ही मेरे शरीर के विभिन्न अंग हैं। जिस प्रकार शरीर के एक अंग के नष्ट होने से हमारा शरीर सुखी नहीं रहता, उस

(शेष पृष्ठ 7 पर)

वेदोऽखिलो धर्म मूलम्

ले.-डा. निर्मल कौशिक १६३ आदर्श नगर, ओल्ड कैंट रोड फरीदकोट पंजाब

सम्पूर्ण विश्व के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन हेतु वैदिक साहित्य का ज्ञान आवश्यक है। वेद विद्वानों के लिए ज्ञान का अक्षुण्ण भंडार हैं। भारतीय संस्कृति की समृद्ध धरोहर के रूप में वेद आज के वैज्ञानिक युग की अनिवार्यता सिद्ध हो रहे हैं। 'वेद' शब्द संस्कृत संस्कृत की विद् धातु से उद्भूत है जिसका अर्थ है 'जानना' अर्थात् किसी विषय अथवा वस्तु का ज्ञान प्राप्त करना। वेद केवल पुस्तक वाचक शब्द नहीं है अपितु भिन्न-भिन्न कालों में रचित अनेकानेक ऋषियों एवं साधकों के अनुभूति सिद्ध व ईश्वरीय (प्रदत) ज्ञान का संकलन है। वेदों में सभी विद्याएं बीज रूप में विद्यमान हैं। प्राचीन गुरुकुल परम्परा में छात्रों द्वारा वेदों की ऋचाएं कण्ठस्थ की जाती थी। कालांतर में लिपिबद्ध रूप में वेदों का अध्ययन किया जाने लगा। वेद ईश्वरीय ज्ञान है अतः अपौरुषेय है। वेद एक ईश्वरीय वरदान के रूप में इष्ट की प्राप्ति और अनिष्ट को रोकने का अलौकिक उपाय बताता है।

हम सदियों से देखते आ रहे हैं कि किसी भी धार्मिक उत्सव की सम्पन्नता वेदमन्त्रों के बिना सम्भव नहीं है। तभी तो पाश्चात्य विद्वान मैक्समूलर ने कहा है कि "जब तक पृथ्वी पर पर्वत और सरिता है तब तक ऋग्वेद की महिमा संसार में प्रसारित होती रहेगी।"

वैदिक शिक्षा कर्म, उपासना और ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करती है। वेद भारतीय जीवन पद्धति एवं भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरुप जीवनयापन करने के लिए प्रकाशस्तम्भ के समान मानव के जीवनपथ को आलोकित करते हैं। जब तक हमारी शिक्षा प्रणाली और जीवन शैली गुरुकुल परम्परा के रूप में वैदिक शिक्षा पर आधारित रही तब तक भारत अध्यात्म के क्षेत्र में विश्व भर में गुरु के पद पर आसीन रहा। वैदिक शिक्षा के ह्रास के साथ भारतीय शिक्षा रुपी मेरुदण्ड खण्डित हो गया और विदेशी आक्रमणों के कारण अखण्ड भारत भी खण्ड-खण्ड हो गया।

अब तक यह स्पष्ट हो चुका है कि ज्ञान का प्रथम पुञ्ज जो अभी तक उपलब्ध हुआ है वह वेद है। वेदों के विद्वान इन वेदों को सृष्टि विज्ञान और लौकिक ज्ञान विज्ञान की पुस्तक मानते है। यह सब दर्शाता है कि हमारे ऋषिगणों और साधकों ने सृष्टि का कितना गहन और सूक्ष्म अध्ययन किया था। तब हमारे पूर्वजों ने अनेक ऐसे आविष्कार किये थे। जिनका विचार अभी तक भी पाश्चात्य वैज्ञानिको ने नहीं किया है।

यजुर्वेद में कहा गया है कि योग्य शासक द्वारा समाज और साम्राज्य की सुरक्षा सुनिश्चित की जानी चाहिए। वेदों में चार प्रकार के संकटो से सुरक्षा की बात कही गई है। रोगो से रक्षा, प्राकृतिक विप्लवों से सुरक्षा, समाज के भीतरी दुष्टो से सुरक्षा तथा बाहर के शत्रुओं से सुरक्षा। वेदों में कहा गया है कि वैद्यक और यज्ञों द्वारा व्यक्तिगत व्याधि और समाजगत महामारियों की रक्षा हो सकती है। भीतरी रक्षा समाज के दुष्टों से की जाती है और बाहरी रक्षा बाहर के शत्रुओं से। जिस समाज की इस प्रकार रक्षा होती है, वही समाज उत्तम है, श्रेष्ठ है वही 'आर्य समाज' कहलाता है। परन्तु उत्तम, श्रेष्ठ अथवा आर्य समाज तभी हो सकता है जब शासन अच्छे राजतन्त्र द्वारा हो। अच्छा राजतन्त्र तभी हो सकता है जब शासक प्रजा द्वारा मनोनीत हो। इस प्रकार हजारों वर्ष पूर्व रचित इन वेदों में लोकतान्त्रिक शासन व्यवस्था का उल्लेख उपलब्ध है।

वेदो में धनसंग्रह के पांच नियम बताए गए हैं।

(१) धन संग्रह करते समय अपने शरीर को अधिक कष्ट न हो।

(२) किसी दूसरे प्राणी को भी कष्ट न हो।

(३) जीवन निर्वाह के लिए अपने परिश्रम से अर्जित धन ही उपयोग में लाया जाए किसी अन्य का नहीं।

(४) अपने अर्जित धन को किसी अच्छे कार्य/उत्कृष्ट कार्य में ही लगाना चाहिए निकृष्ट/बुरे कार्य में नहीं।

(५) धन संग्रह करते समय विद्या अर्थात् पढ़ने लिखने में बाधा नहीं आनी चाहिए। जो अर्थ (धन) इन नियमों के विपरीत अर्जित किया जाता है। उससे सदैव अनर्थ हो जाता है।

उच्च विचारधारा और वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित इन वेदों की रचना भले ही हजारों वर्ष पूर्व हुई हो तो भी उसमें वर्णित तथ्य और तर्क आज भी उतने ही प्रासंगिक और जीवनोपयोगी है। भारतीय जीवन शैली और परम्पराओं को शाश्वत रूप प्रदान करने में सक्षम है। वैज्ञानिक प्रगति आध्यात्मिक गहनता के सभी बीजमन्त्र सूत्र रूप में इन वेदों में उपलब्ध है। वेदों में २८ प्रकार के वायुयानों का उल्लेख है। इनके द्वारा ही हमारे ऋषि सूर्य, चन्द्रादि मण्डलो में जाते थे। उनका सामाजिक जीवन भी वेदानुकूल ही था।

उनका उद्देश्य था सभी ओर शान्ति एवं सुख समृद्धि का परिवेश स्थापित करना। वैदिक परम्पराओं और भारतीय संस्कृति के उत्थान में इन वेदों का विशिष्ट योगदान रहा है। भारतीय संस्कृति का आधार स्तम्भ कहे जाने वाले ये वेद विश्व के सभी धर्मों का मूल है। विश्वभर के सभी धर्मों का दिशा निर्देश हमें इन्हीं से मिलता है। वेदवाणी-सभी धर्मों की मूल है अतः यह सर्वमान्य है कि 'वेदोऽखिलो धर्म मूलम्' आज नहीं तो आने वाले समय में सभी को यह बात खुले मन से और मुक्त कण्ठ से कहनी होगी कि वेद सभी धर्मों का आधार (मूल) हैं।

वेदवाणी

जागते रहो

यो जागारः तमृचः कामयन्ते यो जागार तमु सामानि यन्ति।
यो जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः।।

-ऋ. ५।४४।१४; सा० उ० ९।२।५

ऋषिः-**अवत्सारः काश्यपः।।** देवता-**विश्वेदेवाः।।** छन्दः-**विराट्त्रिष्टुप्।।**

विनय-संसार में पूरिपूर्ण जाग्रत् तो एक ही है; वह अग्नि=परमात्मा है। यह सर्वथा अनिद्र है, त्रिकाल में जाग्रत् है। उसमें तमोगुण का (अज्ञान व आलस्य का) स्पर्श तक नहीं है। अतएव सब ऋचाएँ, संसार की सब स्तुतियाँ, उसी को चाह रही हैं-उसके प्रति हो रही हैं। सब सामों का, मनुष्यों के किये सब यशोगानों का, सब स्तुति-गीतियों का भाजन भी वही एक परम-जाग्रत् देव हो रहा है और देखो, यह समस्त भोग्य-संसार-भोग्य बना हुआ यह सोमरूप ब्रह्माण्ड-उसी जागरूक अग्निदेव के पैरों में पड़ा हुआ कह रहा है "मैं तेरा हूँ, तेरे ही आश्रय से मेरी सत्ता है, तेरी मित्रता में मेरा निवास हो रहा है; तुझसे हटकर मुझे और कहीं ठौर नहीं है।"

इसी प्रकार हम मनुष्य-जीव भी यदि अपनी शक्तिभर सदा जाग्रत् रहेंगे, सदा सावधान और कटिबद्ध रहेंगे, तमोगुण को दूर हटाकर सदा चैतन्ययुक्त, अतन्द्र रहेंगे, आलस्य के कभी भी वशीभूत न होकर अपने कर्त्तव्य को तत्क्षण करने के लिए सदा तैयार, उद्यत रहेंगे, कभी प्रमाद न करते हुए-बिना भूलचूक के-अपने कर्त्तव्य को ठीक-ठीक करते जाने के अभ्यासी हो जाएँगे, तो हम भी उतने ही अंश में 'अग्नि'-रूप हो जाएँगे।

परन्तु वास्तविक, भोक्ता होना आसान नहीं। संसार के विषयी पुरुष तो भोगों के भोक्ता होने के स्थान पर भोगों के भोग्य बने हुए हैं, परन्तु वही ऐश्वर्य, वही सुख, वही सुख-भोग, जिसके पीछे यह सब संसार दौड़ता फिरता है, परन्तु लोगों को मिलता नहीं, वहीं ऐश्वर्य (सोम)-जाग्रत् पुरुष के सामने हाथ बाँधकर, सेवक होकर, शरण पाने के लिए आ खड़ा होता है। अग्नित्व को प्राप्त उस मनुष्य के लिए वास्तव में संसार के सब भोग्य पदार्थ उसकी मित्रता में, उसके हितसाधन के निमित्त, सदा नियत स्थान पर उपस्थित रहते हैं; उसे उन पर ऐसा प्रभुत्व प्राप्त हो जाता है, अतः हे मनुष्यो! जागो, जागो, सदा जाग्रत् रहो! तामसिकता त्यागो और निरालस्य-जीवन का अभ्यास करो! जागरूकों के लिए ही यह संसार है; स्तुत्यता, लोकमान्यता, यश, भोक्तृत्व यह सब जागते रहने वाले के ही लिए है।

उच्छ्वञ्चस्व पृथिवि–ऋग्वेद

ले०-शिवनारायण उपाध्याय, 73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी, कोटा

हम सभी पृथ्वी के वासी है। पृथ्वी पर रहते हैं। पृथ्वी द्वारा उपलब्ध कराये गये अन्न, फल, फूल, जल और वायु द्वारा हमारा जीवन बना हुआ है, चल रहा है। अथर्ववेद के 63 मंत्रों में पृथ्वी एवं हमारे सम्बन्ध के विषय में विस्तृत वर्णन हुआ है। पृथ्वी को इस सूक्त में 3 बार माता शब्द से संबोधित किया गया है। ऋग्वेद में ऐसा कोई बड़ा पृथ्वी सूक्त तो नहीं है परन्तु फिर भी पृथ्वी के विषय में कुछ मंत्र आये है। पृथ्वी को माता शब्द से सम्बोधित भी किया है। विशेष रूप से ऋग्वेद मण्डल 10 के सूक्त 18 तथा सूक्त 72 में पृथ्वी के सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी दी गई है। हम इस लेख में इसी पर चर्चा कर रहे हैं।

उच्छ्वञ्चस्व पृथिवि मा नि बाधथाः सूपायनास्मै भव सूपवञ्चना।

माता पुत्रं यथा सिचाभ्येनं भूम ऊर्णुहि।। ऋ. 10.18.11

अर्थ-(पृथिवी) पृथिवी। (उत् श्वञ्चस्व) उत्साह पूर्वक उत्तम पथ की ओर ले चल। तू (मा वि बाधथाः) पीड़ा मत दे। (अस्मे सूपायना) इस सुख से पास आने वाली (सु उप वञ्चना) सुख से पास रहने वाली (भव) होकर रह। हे (भूमे) सर्वोत्पादकों (यथा माता पुत्रं सिचा अभि ऊर्ण ते) जिस प्रकार माता पुत्र को अपने आंचल से ढांकती है। उसी प्रकार तू (एनम् अभिसिंच) उसका अभिषेक कर और (अभि ऊर्णहि) सब ओर से उसे ढक।

भावार्थ-हे पृथ्वी माता। हमें उत्साह पूर्वक उत्तम मार्ग की ओर ले चल। तू हमें कष्ट मत दे। हमें सुख देने वाली बनकर रह। जैसे माता अपने पुत्र की आंचल में ढक कर रक्षा करती है वैसे ही तू भी हमारी रक्षक बन।

उप सर्प मातरं भूमिमेता-मुरूव्यचसं पृथिवीं सुशेवाम्।

ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत एषा त्वा पातु निर्ऋतेरूपस्थात्।। ऋ. 10.18.10

अर्थ-हे मानव। तू (मातरम्) मातृ तुल्य आदर योग्य (एतां) इस (उरूव्यचसम्) आकाश जैसी विशाल (पृथिवीम्) पृथ्वी को (सुसेवाम्) सुखदायी (भूमिम्) भूमि को (उप सर्प) प्राप्त हो। (एषा) वह (ऊर्ण म्रदाः) ऊन जैसी मृदु (दक्षिणावतः) दान देने योग्य उत्साह व शक्तिजनक धन के स्वामी की (युवति) युवती स्त्री तुल्य सर्व स्वामिनी है। वह (त्वा) तुझे (निर्ऋतेः उपस्थात्) पाप कर्म से (पातु) बचाये।

भावार्थ-हे मानव। तू मातृ तुल्य इस आकाश सम विशाल सुख देने वाली भूमि को प्राप्त हो। यह मृदु, दानी, उत्साही तथा शक्तिजनक धन के स्वामी की स्त्री के समान है। वह तुझे सब पापों से बचाये।

उच्छ्वञ्च माना पृथिवी सु तिष्ठतु सहस्त्रंमित उप हि श्रयन्ताम्।

ते गृहासो घृतश्चुतो भवन्तु विश्वाहास्मै शूरणाःसन्त्वत्र- ।।2।।

अर्थ-(पृथिवी उत् श्वञ्च-माना) पृथ्वी उत्साह का सृजन करती हुई (सु तिष्ठतु) सुख से आसीन हो। (सहस्त्रं मितः) सहस्त्रों अन्नादि और प्राणी (उपश्रयन्ताम् हि) उस पर रहे। (ते) वे (गृहासः) हमारे घर (घृतश्चुतःभवन्तु) घृतवत, स्नेहयुक्त, शांतिदायक हों। वे (अस्मै) हमें (अत्र) यहाँ (शरणाः सन्तु) दुःख नाशक शरण हों।

भावार्थ-हे पृथ्वी माता। तू हमें उत्साहपूर्वक उत्तम पथ की ओर ले चल। तुझ पर ही सहस्त्रों वनस्पतियां और प्राणी रहते हैं। ये सब हमारे लिए सुखदाता और शांति देने वाले बनें। वे सब हमारे दुःखों के विनाशक बनें।

ऋग्वेद मण्डल 10 सूक्त 72 में सृष्टि के निर्माण के साथ ही पृथ्वी की उत्पत्ति के विषय में भी चर्चा हुई है। सृष्टि उत्पत्ति के पूर्व प्रलयावस्था थी। जिसमें प्रकृति अपने कारण रूप में सत्व, रज और तम तीन प्रकार के सूक्ष्मातिसूक्ष कणों में स्थित थी। जब सृष्टि उत्पन्न करने की ईश्वर की इच्छा हुई तो उसने सृष्टि की उत्पत्ति इस प्रकार की।

ब्रह्मणस्पति रेता सं कर्मारइ-वाधमत्।

देवानां पूर्व्ये युगेऽसतः सदजायतः।। ऋ. 10.72.2

अर्थ-प्राणियों के स्वामी परमात्मा ने इन कणों को लुहार के समान धोंका। इससे सूर्यादि लोकों के प्रथम युग में अव्यक्त से व्यक्त संसार आया। परमाणुओं के कणों को धोंकने से क्या परिवर्तन हुआ है? इसके उत्तर में कहा गया-

यद् देवा अदः सलिले सुसंरबन्धा अतिष्ठत।

अत्रा वो नृत्यतामिव तीव्रो रेणुर पायत।। ऋ. 10.72.6

प्रकृति को आग से धोंकने पर महत् कण बने थे। फिर इस महत् तत्व में गति होने लगती है तो वह महत् अथवा सलिल कहलाती है, सलिल जल को भी कहते हैं। यह जल गतिशील परमाणुओं का सागर था जो कि सूर्यादि लोक सुव्यवस्थित स्थित थे। कार्य अपने कारण में स्थित रहता है। इसे सत् कार्य वाद का सिद्धान्त कहा जाता है। इससे जैसे तेज नाचने वालों का तेज परमाणु पुंज दूर था।

यद्देवा यतयो यथा भुवना-न्यपिन्वत।

अत्रा समुद्र आ गूऽहमा सूर्यमजभर्तन।। ऋ. 10.117.7

अर्थ-नियम में बंधे सूर्यादि लोक जिस प्रकार सब भुवनों को जीवन के साधन प्रकाश, वर्षा से पालन करते हैं। परमाणुओं से भरे इस आकाश में गूढ़ तत्व तक सूर्य तक को धारण करते हैं।

पृथ्वी की उत्पत्ति सूर्य से हुई है, इस पर कहा गया है-

भूर्जज्ञ उत्तानपदो भुव आशा अजायन्त।

अदितेर्दक्षो अजायत दक्षाद्व-दितिः परि।। ऋ. 72.4

अर्थ-(भूः) पृथ्वी (उत्तान-पाद) सूर्य के (जज्ञे) उत्पन्न होती है (भुव) पृथ्वी से (आशाः) पृथ्वी की दिशा को बताने वाले भेद (अजायत) उत्पन्न होता है। (दक्षात् उ) आदित्य से (अदितिः) उषा (परि) उत्पन्न होती है।

भावार्थ-पृथ्वी सूर्य से उत्पन्न होती है और पृथ्वी से उसके कोण और परिचछेद को सूचित करने वाले भेद उत्पन्न होते हैं (प्रातः कालिक उषा) से आदित्य उत्पन्न होता है और सायं कालीन उषा (सन्ध्या) आदित्य से उत्पन्न होती है।

द्यौश्च नः पृथिवी च प्रचेतस ऋतावरी रक्षता मंहसो रिषः।

मा दुर्विदत्रा निर्ऋतिर्न ईशत तद् देवाना मवो अद्या वृणीमहे।। ऋ. 10.36.2

अर्थ-(द्यौ च पृथिवी च) सूर्य तथा पृथ्वी तथा उनके तुल्य सर्वाश्रय व अन्नदाता (प्रचेतसा) ज्ञानवान्, उदार चित्त युक्त (ऋतावरी) जलवत् शांतिदायी एवं अन्नवत् पुष्टि कारकजन (नः) हमारी (रिषः) विनाशक (अंहसः) पाप से (रक्षताम्) रक्षा करें (दुःविंदत्रा) दुःखदायी। (निर्ऋति) कष्ट दशा (नःमा ईषतः) हम पर प्रभाव न करे (तत्) इसीलिए (अद्य) आज जन (देवानाम्) विद्वानों एवं मेघ, भूमि, सूर्य आदि के (अवः) बल की (वृणीमहे) प्रार्थना करें।

शं रोदसी सुबन्धवे यह्वी ऋतस्य मातरा।

भरतामप यद्रपो द्यौ पृथिवी क्षमा रपो मो षु ते किं चनाम-मत्।। ऋ.10.59.8

अर्थ-(यह्वी रोदसी) महान् भूमि और सूर्य की तरह (ऋतस्यमातरा) सत्योपदेश-ज्ञान को देने वाले माता-पिता, गुरू आदि (शम्) उत्तम बन्धु हेतु कल्याणकारी एवं शांतिदाता होवे। हे (द्यौः पृथिवी) सूर्यवत् पिता। हे पृथ्वी तुल्य माता। आप दोनों (क्षमा) क्षमाशील होकर

(शेष पृष्ठ 7 पर)

पृष्ठ 4 का शेष-प्रजा के सुखों...

प्रकार ही समग्र प्रजा मेरे शरीर के समान होने के कारण, मेरे विभिन्न अंग होने के कारण, मेरे इन अंग स्वरूप प्रजा का भी स्वस्थ रहना आवश्यक होता है। यदि मेरी इस प्रजा का एक सदस्य भी सुखी नहीं है, समृद्ध नहीं है, खुश नहीं है तो मुझे कष्ट होना निश्चित है। इस लिए मैं सदा प्रजा से प्रेम बनाए रखूंगा। जिस प्रकार अंगों को स्वस्थ रखने के लिए मैं सदा पुरुषार्थ करता हूँ, उस प्रकार ही मैं प्रजा को सुखी रखने के लिए सदा प्रयास करूंगा, सदा प्रयत्न करूंगा क्योंकि यह ही मेरा कर्तव्य है, यह ही मेरा कार्य है और यह ही मेरा व्यवसाय है।

स्वामी गंगा गिरी जनता गर्ल्ज कॉलेज, रायकोट में अलुमनी मीट का आयोजन

गुरुकुल की पावन तपोभूमि पर निर्मित ग्रामीण क्षेत्र की जानी-मानी शैक्षणिक संस्था स्वामी गंगा गिरी जनता गर्ल्ज कॉलेज, रायकोट में प्रिंसीपल मैडम श्रीमती सरला सग्गड़ जी के सुयोग्य निर्देशन में अलुमनी मीट का आयोजन किया गया। इस अवसर पर मुख्य मेहमान के रूप में पंहुची डॉ. (श्रीमती) परमजीत कौर जी (प्रिंसीपल, खालसा कॉलेज फॉर वूमैन, सिद्धवां खुर्द), जो कि इसी कॉलेज की छात्रा रह चुकी हैं-को कॉलेज प्रबंधक कमेटी के प्रधान श्री रमेश कौड़ा जी, जनरल सैक्रेटरी श्री राजिन्द्र कौड़ा जी, सदस्य श्रीमती हरजीत कौर जी, प्रिंसीपल श्रीमती सरला सग्गड़ जी, श्रीमती अंजू कौड़ा जी, श्रीमती मंजू कौड़ा जी तथा रमन जैन जी ने पुष्प-गुच्छ भेंट कर हार्दिक अभिनन्दन किया।

मैडम सरला सग्गड़ जी ने सबका स्वागत करते हुए कहा कि इस कॉलेज से पढ़कर तथा ऊँचे मुकाम पर पंहुची छात्राओं से मिलकर बहुत खुशी तथा मान का एहसास होता है।

इस अवसर पर छात्राओं ने बड़े उत्साह के साथ रंगारंग कार्यक्रम प्रस्तुत किया तथा पुरानी छात्राओं ने अपने बीते समय की यादों को ताज़ा करते हुए अपने विचारों से सबको अवगत करवाया।

स्मृतियों को जगाती पी.पी.टी. एवं तम्बोला गेम सबके आकर्षण का केन्द्र बने रहे।

मैडम परमजीत कौर जी ने अपने पुराने समय की यादों को ताज़ा करते हुए इस कॉलेज पर मान महसूस किया तथा छात्राओं को मेहनत, लगन और ईमानदारी में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने कॉलेज एवं प्रबंधकीय कमेटी का धन्यवाद किया, जिनकी बदौलत वे आज प्रिंसीपल की सेवा निभा रही हैं।

अन्त में तम्बोला गेम की विजेताओं को पुरस्कार वितरित किये गये तथा तत्पश्चात श्री रमेश कौड़ा जी ने आये हुए मुख्य मेहमान तथा सभी छात्राओं का धन्यवाद किया।

इस अवसर पर श्री रमेश कौड़ा जी, श्री राजेन्दर कौड़ा जी, श्रीमती हरजीत कौर जी, श्रीमती अंजू खन्ना जी, श्रीमती मंजू सहगल जी, रमन जैन जी, प्रो. लवलीन कौड़ा जी, श्रीमती पूनम छाबड़ा जी, डॉ. विनोद बाला, डॉ. रविन्दर कौर, श्रीमती शिल्पा गोयल सहित समूह स्टाफ उपस्थित था।

-राजिन्द्र कौड़ा

आर्य मर्यादा साप्ताहिक में विज्ञापन देकर लाभ उठाएं।

बच्चों को ईनाम वितरित किए

आर्य गर्ल्ज सी.सैक. स्कूल, बठिण्डा के प्रांगण में दिनाँक 26-5-2018 दिन शनिवार को हवन यज्ञ करवाया गया। इस अवसर पर स्कूल की प्रिंसीपल श्रीमती सुषमा मेहता, स्टॉफ एवम् बच्चे शामिल हुए। हर साल सेवानिवृत्त अध्यापिका श्रीमती अरूणा अरोड़ा जी अपने विषय संस्कृत तथा कल्पना चावला की याद में विज्ञान विषय में दसवीं कक्षा में प्रथम आने वाली छात्रा को इनाम देते है। इस साल भी उन्होंने स्कूल में पढ़ने वाली छात्रा नेहा पुत्री श्री रमेश कुमार को विज्ञान विषय में तथा संस्कृत विषय में मुस्कान पाण्डे पुत्री श्री शत्रुघ्न पाण्डे को 1000/- - 1000/- रूपये नकद राशि देकर सम्मानित किया। इसी प्रथा को आगे बढ़ाते हुए गणित की सेवानिवृत्त अध्यापिका श्रीमती सुरिन्द्र पाल जी द्वारा अपने गणित विषय में सबसे अधिक अंक प्राप्त करने वाली छात्रा नेहा को 1000/- नकद राशि देकर सम्मानित किया गया। प्रबन्धक कमेटी तथा प्रिंसीपल मैडम जी ने उनका धन्यवाद किया तथा बच्चों को कड़ी मेहनत करने की प्रेरणा दी।

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

पृष्ठ 6 का शेष-उच्छवञ्चस्व पृथिवि...

(यतरपः) हमारे जो भी पाप हों उन्हें (अप भरताम्) दूर करो। (ते) तेरा (किंचन) कुछ भी (मो सु आममत्) हमें कष्ट प्रदान न करे।

इस ऋचा में पृथ्वी को माता के तुल्य माना गया है।

अव द्वके अव त्रिका दिवश्चरन्ति भेषजा।

क्षमा चरिष्णवे ककं भरतामप यद्रपो द्यौः पृथिवी क्षमा रपो मो षु ते किं चनाम-मत्।। ऋ.10.59.9

अर्थ-(दिवः) आकाश से (द्वके) दो-दो और (त्रिका) तीन-तीन (भेषजा) रोग दूर करने वाली शक्तियां भूमि की दिशा में आती हैं और (क्षमा) भूमि में (एक कम् चरिष्णु) खाने योग्य अन्न रूप भेषज है। हे (द्यौः पृथिवी क्षमा) सूर्य और भूमि के तुल्य समर्थ विद्वत् जनो। (यत् रपः अप भरताम्) जो हमारा पाप दुःखादि हो उसे मिटाओ और (ते किं चन रपः मोसु आममत्) तेरा कोई भी कष्टदायी पदार्थ कष्ट न दे।

समिन्द्रेरय गामनड्वाहं य आवहदुशीनराण्या अनः।

भरतामप यद्रपो द्यौः पृथिवी क्षमा रपो मो षु ते किं चनाम-मत्। ऋ. 10.59.10

अर्थ-(उशीनराण्या) उशीनराणी पृथ्वी पर जो (अवः) जीवन शक्ति (सम् ईरय) को पाता है उस (गाम्) किरण समूह को है (इन्द्र) तेजस्वी सूर्य। तू भली प्रकार दे। हे सूर्य और पृथ्वी (यत् रपः अप भरताम्) हमारा जो पाप, कष्ट हो उसे दूर कर। (ते रपः किंचन मो सु आममत्) तेरा दोष, मल, ताप इत्यादि हमें कोई कष्ट न दे।

भावार्थ-पृथ्वी के ऊपर जो जीवन शक्ति प्राप्त करता है उसे किरण समूह को प्रकाशदाता सूर्य ही प्राणों को प्रेरित करता है। परमात्मा ही हमारे पाप व दोष को मिटा सकता है।

कुरीतियों के विरूद्ध आन्दोलन छेड़ेगा आर्य समाजः सभा प्रधान सुदर्शन

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (रजि.) की कार्यकारिणी की एक आवश्यक बैठक सभा प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी की अध्यक्षता में सभा कार्यालय गुरुदत्त भवन चौक किशनपुरा जालन्धर में सम्पन्न हुई। मीटिंग में उपस्थिति सभी कार्यकारिणी के सदस्य।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (रजि.) की कार्यकारिणी की एक आवश्यक बैठक दिनांक 2 जून 2018 को सभा कार्यालय गुरूदत्त भवन चौक किशनपुरा जालन्धर में हुई जिसकी अध्यक्षता सभा प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी ने की। इस बैठक में पंजाब में फैल रहे अंधविश्वास पर विस्तार से चर्चा की गई। श्री सुदर्शन शर्मा जी ने बताया कि महान समाज सुधारक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने जहां वेद का प्रचार कर सत्य की राह दिखाई वहीं सम्पूर्ण भारतवर्ष में भ्रमण कर देश, समाज में फैले पाखंड, कुरीतियों, भ्रमों, भ्रान्तियों व अंधविश्वास से ग्रसित देशवासियों की दयनीय दशा को देखा और दृढ़ संकल्प के साथ पाखंडों का खंडन किया। उन्होंने कहा कि आज फिर आर्य समाज की जरूरत महसूस की जा रही है। आज फिर अंधविश्वास और पाखंड देश में चरम पर पहुंच गया है। इसके खिलाफ आर्य समाज एक आन्दोलन छेड़ेगा। उन्होंने कहा कि आर्य समाज पंजाब में वेद प्रचार का कार्य बढ़ाने का प्रयास कर रहा है ताकि इन कुरीतियों से जनता को अवगत करवाया जाए। सभा महामंत्री श्री प्रेम भारद्वाज जी ने बताया कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब सभी आर्य समाजों के प्रतिनिधियों की एक आवश्यक बैठक सभा कार्यालय जालन्धर में जल्द बुलाएगी और पंजाब में अपनी गतिविधियां तेज करेगी। सभा प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी ने इस बैठक में बताया कि तीनों आर्य प्रतिनिधि सभाओं पंजाब, हरियाणा एवं दिल्ली ने मिल कर सर्वसम्मति से केन्द्रीय राज्य मंत्री श्री सत्यपाल सिंह जी को आर्य जगत की शिरोमणि संस्था, स्वामी श्रद्धानन्द जी की तपस्थली गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार का कुलाधिपति मनोनीत किया है जिनके नेतृत्व में गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय हरिद्वार अपनी पुरानी ख्याति को पुनः प्राप्त करेगा। श्री सत्यपाल सिंह जी पूर्व पुलिस कमिश्नर मुम्बई रहें हैं और कट्टर आर्य समाजी हैं। सभा प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी ने बताया कि पिछले दिनों सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली की बैठक में भी पंजाब सभा ने भाग लिया। उम्मीद है कि सार्वदेशिक सभा का विवाद भी जल्द ही समाप्त हो जायेगा और आर्य समाज पहले की तरह कार्य करती रहेगी। इस बैठक में श्री सरदारी लाल जी उप प्रधान, चौधरी ऋषिपाल सिंह जी उप प्रधान, श्रीमती राजेश शर्मा उप प्रधान, श्री स्वतंत्र कुमार उप प्रधान, श्री नरेश शर्मा जालन्धर, श्री मुनीष सहगल उप प्रधान, श्री विपिन शर्मा जी सभा मंत्री, श्री विजय सरीन जी सभा मंत्री, श्री सुदेश कुमार सभा मंत्री, श्री भारत भूषण मेनन बरनाला सभा मंत्री, श्री रणजीत आर्य सभा मंत्री, श्री विनोद भारद्वाज नवांशहर सभा मंत्री, श्री सुधीर शर्मा जी सभा कोषाध्यक्ष, श्री अशोक परूथी जी एडवोकेट रजिस्ट्रार, श्री सत्य प्रकाश उप्पल मोगा, श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल नवांशहर, श्री स्वामी सूर्यदेव जी गोनियाना मंडी, श्री सूर्यकान्त शोरी बरनाला विशेष रूप से उपस्थित हुये।

केन्द्रीय राज्यमंत्री डा. सत्यपाल सिंह जी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के चांसलर बने

केन्द्रीय मानव संसाधन विकास राज्य मंत्री श्री सत्यपाल सिंह को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार का कुलाधिपति चुना गया है। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की तीन प्रबन्धकर्त्री सभाओं आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, दिल्ली एवं हरियाणा के प्रधानों ने सर्वसम्मति से विश्वविद्यालय के कुलाधिपति के रूप में श्री सत्यपाल सिंह जी का चयन किया है। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार के कुलाधिपति के चयन को लेकर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, दिल्ली एवं हरियाणा सभाओं के प्रधानों ने बुधवार दिनांक 30 मई 2018 को चण्डीगढ़ में बैठक की जिसमें आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री धर्मपाल आर्य जी, आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा के प्रधान मास्टर रामपाल आर्य ने सर्वसम्मति से गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति के रूप में श्री सत्यपाल सिंह जी का चयन किया।

श्री सत्यपाल सिंह जी 2014 के लोकसभा चुनाव में उत्तर प्रदेश के बागपत लोकसभा सीट से भाजपा के सांसद चुने गये। उनके पास मानव संसाधन विकास और गंगा सफाई राज्य मंत्री का दायित्व है। श्री सत्यपाल सिंह जी को 23 अगस्त 2012 को मुम्बई में पुलिस आयुक्त नियुक्त किया गया था। उन्होंने 31 जनवरी 2014 को स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के लिये आवेदन किया और अपना त्यागपत्र दे दिया। वह अपने पद से इस्तीफा देने वाले मुम्बई के पहले पुलिस आयुक्त हैं। उन्होंने इकोनामिक टाइम्स के साथ एक साक्षात्कार में 1 फरवरी 2014 को बताया कि मैंने अपनी आतंरिक आवाज पर मुम्बई पुलिस आयुक्त के पद से त्यागपत्र दिया। उन्होंने एक पुलिस अधिकारी के तौर पर कई वर्षों तक मुम्बई और महाराष्ट्र के लोगों की सेवा की। 2 फरवरी 2014 को तत्कालीन गुजरात के मुख्यमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी और भाजपा अध्यक्ष श्री राजनाथ सिंह की उपस्थिति में भाजपा में शामिल हो गये। उन्होंने दो पुस्तकें एक नक्सल खतरे से निपटने के लिये और दूसरी तालाश इन्सान की लिखी। आर्य जगत को उन से बहुत उम्मीद है। उनके गुरुकुल कांगड़ी के चांसलर बनने से आर्य समाज की इस शिरोमणि शिक्षण संस्था का कायाकल्प होगा और वह उन्नति के पथ पर अग्रसर होगी।

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। **E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org**
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।